130136 - नज़्र (मन्नत) के रोज़े को शव्वाल के छः दिनों के रोज़ों पर प्राथमिकता प्राप्त है ?

प्रश्न

ऐसा हुआ कि मैं बीमार पड़ गयी और मैं ने मन्नत (नज़्र) मानी कि यदि मैं उससे स्वस्थ हो गयी तो अल्लाह सर्वशक्तिमान के लिए छः दिन रोज़ा रखूँगी, और मैं ने यह निर्धारति नहीं किया था कि किस समय रखूंगी। अल्लाह की प्रशंसा है कि मैं स्वस्थ हो गयी, और रजब के महीने में रोज़ा रखना शुरू की, पाँच दिन रोज़ा रखी और थक गयी, फिर पाँच दिन शाबान के महीने में रोज़ा रखी और थक गयी, फिर रमज़ान का महीना आया और मैं उसका रोज़ा रखी, और अब हम शव्वाल के महीने में हैं, तो क्या बेहतर यह है कि मैं शव्वाल के छः रोज़े रखूँ या नज़्र के बाक़ी पाँच रोज़े रखूँ ? मुझे इससे सूचित करें, अल्लाह आप को आशीर्वाद दे।

विस्तृत उत्तर

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह तआला के लिए योग्य है।.

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह के लिए है।

“आपके ऊपर अनिवार्य है कि सर्व प्रथम नज़्र के बाक़ी रोज़े रखें, फिर अगर आप सक्षम हैं तो शव्वाल के छः रोज़े रखें, और यदि आप ने उसे छोड़ दिया तो कोई बात नहीं है, क्योंकि शव्वाल के छः रोज़े मुसतहब (ऐच्छिक) हैं अनिवार्य नहीं हैं। परंतु नज़्र का रोज़ा फर्ज़ (अनिवार्य) है, अतः आपके ऊपर अनिवार्य है कि नफ्ल से पहले फर्ज़ (अनिवार्य) रोज़े से शुरूआत करें, और यदि आप ने निरंतर (लगातार) रोज़ा रखने की नीयत की थी अर्थात यह कि आप पंद्रह दिन लगातार रोज़ा रखेंगी तो ज़रूरी है कि आप लगातार रोज़ा रखें, उसे अलग अलग रखना जायज़ नहीं है, बल्कि आपके ऊपर उतने दिनों का लगातार रोज़ा रखना अनिवार्य है, और पिछला रोज़ा (जो आपने अलग अलग रखा है) वह निरस्त हो जायेगा।

लेकिन यदि आप ने उन दिनों का निरंतर रोज़ा रखने की नीयत नहीं की थी तो आपके ऊपर बाक़ी बचे हुए पाँच दिनों का रोज़ा अनिवार्य है जिन्हें आप इन शा अल्लाह रख लेंगी और मामला समाप्त हो जायेगा।

तथा इसके बाद आपके लिए नज़्र (मन्नत) मानना उचित नहीं है, क्योंकि नज़्र मुनासिब नहीं है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फरमाते हैं : “तुम नज़्र न मानो, क्योंकि नज़्र तक़्दीर में से कोई चीज़ नहीं फेर सकती है, बल्कि उसके द्वारा कंजूस से निकलवाया जाता है।”

अत: नज़्र मानना उचित नहीं है चाहे बीमार के लिए हो या बीमार के अलावा के लिए, लेकिन जब भी इंसान ने अल्लाह की आज्ञाकारिता की नज़्र मान ली तो उसके लिए उसे पूरा करना अनिवार्य है जैसे कि रोज़ा और नमाज़, क्योंकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फरमान है : “जिसने अल्लाह तआला की आज्ञाकारित की नज़्र मानी तो उसे चाहिए कि अल्लाह की आज्ञाकारिता करे, और जिसने उसकी अवज्ञा करने की नज़्रर मानी वह उसकी अवज्ञा न करे।” इसे बुखारी ने अपनी सहीह में रिवायत की है।

यदि मनुष्य ने कुछ दिनों के रोज़े, या दो रकअत नमाज़, या इतने माल के दान की नज़्र मानी तो उसके लिए ज़रूरी है कि जिस आज्ञाकारिता की नज़्र मानी है उसको पूरा करे, क्योंकि अल्लाह तआला ने विश्वासियों की सराहना करते हुए फरमाया है :

[يُوفُونَ بِالنَّذْرِ وَيَخَافُونَ يَوْمًا كَانَ شَرُّهُ مُسْتَطِيرًا] [الإنسان: 7

“वे लोग नज़्रपूरी करते हैं और उस दिन (के अज़ाब) से डरते हैं जिसकी बुराई फैल जाने वाली होगी।” (सूरतुल इंसान : 7)

और इसलिए कि पैगंबर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नज़्र पूरी करने का आदेश दिया है जैसाकि पिछली हदीस में है।

ज्ञात हुआ कि नज़्र स्वस्थ होने का कारण नहीं है, और न ही अपेक्षित आवश्यकता के साकार होने का ही कारण है, इसलिए उसकी ज़रूरत नहीं है, बल्कि वह एक ऐसी चीज़ है जिसका आदमी अपने आपको मुकल्लफ बना लेता है और उसके द्वारा कंजूस से निकलवाया जाता है, फिर उसके बाद वह पछताता है और तंगी में पड़ जाता है और यह कामना करता है कि उसने नज़्र न मानी होती !तो अल्लाह तआला की सर्वप्रशंसा है कि शरीअत ऐसी चीज़ लेकर आई है जो लोगों के लिए सबसे आसान और सबसे लाभदायक है और वह नज़्र से निषेद्ध है।” अंत हुआ।

समाहतुश्शैख अब्दुल अज़ीज़ बिन बाज़ रहिमहुल्लाह